अध्याय चौथा

हिंदी के समस्याप्रधान उपन्यासों में भगवतीबाबू का स्थान

अध्याय चौथा

हिन्दी के समस्याप्रधान उपन्यासों में - भगवतीबाबू का स्थान

"यह एक विचित्र विरोधाभास की स्थिति है कि हम भगवतीबाबू को मूलत: उपन्यासकार मानें या कवि या कहानीकार। यह वर्माजी की सफलता है कि उन्होंने लोगों को भ्रम में रखा है"[1] श्री ठाकुरसिंह का यह कथन वास्तविक नहीं है। हाँ ; यह सच है कि भगवतीबाबू कवि, कहानीकार, उपन्यासकार, नाटककार, संपादक फिल्मी पटकथा-संवाद लेखक आदि विविध रूपों में अपनी प्रतिभा का परिचय दिया है और अपेक्षित ख्याति भी प्राप्त की है। मात्र वे सबसे अधिक उपन्यासकार के नाते ही प्रसिध्द है। "भगवतीबाबू प्रेमचंद से जैनेंद्र और यशपाल तक की एक महत्वपूर्ण कडी भी है। और प्रेमचंद युग के बाद के पहले और मौलिक कथाकार भी"[2]। उन्होंने स्वयं स्वीकार किया है कि -"हिन्दी साहित्य का संसार यह भूल चुका है कि मैं कवि हूँ। केवल उपन्यासकार के रूप में लोग मुझे जानते हैं"[3] अत: भगवतीबाबू मूलत: उपन्यासकार ही रहे हैं।

भगवतीबाबू के साहित्य-साधना में 'चित्रलेखा' उपन्यास का असाधारण महत्व रहा है। हिन्दी साहित्य जगत् में इसे कदापि भुलाया नहीं जा सकता। उनकी बृहत रचनाओं में 'भूले बिसरे चित्र', 'टेढे मेढे रास्ते', 'सीधी सच्ची बातें' तथा 'प्रश्न और मरीचिका' उपन्यासों का विशिष्ट स्थान रहा है। इनमें युग-जीवन का सर्वांगिण भव्यचित्र साकार हो उठा है। 'भूले बिसरे चित्र' में सन १८८५ से १९३७ ई तक का भारत, 'टेढे मेढे रास्ते' में सन १९३०-३१ ई. का भारत, तो 'सीधी सच्ची बातें' में सन १९३८ ई. से १९४८ ई. तक के पूरे एक दशक के भारत की भव्य झाँकी दिखायी देती है। 'प्रश्न और मरीचिका' उपन्यास में स्वतंत्र भारत की, विशेषकर सन १९४७ से लेकर १९६२ तक के भारतीय जन-जीवन की मोह-भंग अवस्था

---

१ साप्ताहिक हिन्दुस्तान : १५ सितम्बर, १९६३, पृ.सं.४५

२ डॉ. कुसुम वार्ष्णेय : चित्रलेखा से सीधी सच्ची बातें तक - पृ.सं.७

३ -- वही - पृ.सं.३ एक स्वर और से उद्धृत।

को चित्रित किया है। इनके अतिरिक्त 'सामर्थ्य और सीमा' में स्वतंत्र-भारत के पतनोन्मुख सामन्तीय जीवन तथा नेताओं के भ्रष्ट - नेतृत्व पर करारी चोट की है। 'सबहिं नचावत राम गुसाईं' में प्रतीकात्मक रुप में वर्तमान भ्रष्ट राजनीतिक जीवन की विकृतियों के नग्न-चित्र व्यंग्यात्मक शैली में अंके हैं। इस उपन्यास का 'उठा-पटाक' शीर्षक मानों नेताओं की कुर्सी पाने के लिए का ... उठा बैठा रहा है, जो आज की (सन १९८८) राजनीतिपर भी शत-प्रतिशत लागू होता है। इसप्रकार वर्माजी के उपन्यासों में भारत की स्वतंत्रता पूर्व और स्वतंत्रता बाद के युग-जीवन का यथार्थ रुप साकार हो उठा है। उनके सामाजिक और राजनीतिक दोनों उपन्यासों में समकालीन समस्याओं का भी व्यापक चित्रण देखने को मिलता है। निःसंदेह ही भगवतीबाबू हिन्दी साहित्य के महान हस्ताक्षर है।

वर्माजी के उपन्यासों की प्रकाशनानुक्रम से निम्नलिखित सूची है -- यहाँ हम हिन्दी के सुप्रसिध्द उपन्यासकारों से तुलनाकर, हिन्दी समस्या-प्रधान उपन्यास जगत् में उनका स्थान निर्धारण का प्रयास करेंगे।

उपन्यास	प्रथम प्रकाशन-सन
१. पतन	१९२८
२. चित्रलेखा	१९३४
३. तीन वर्ष	१९३६
४. टेढे मेढे रास्ते	१९४६
५. आखिरी दाँव	१९५०
६. अपने खिलौने	१९५७
७. भूले बिसरे चित्र	१९५९
८. वह फिर नहीं आई	१९६०
९. सामर्थ्य और सीमा	१९६२
१०. थके पाँव	१९६३

११. रेखा	१९६४
१२. सीधी सच्ची बातें	१९६८
१३. सबहिं नचावत राम गुसाईं	१९७०
१४. प्रश्न और मरीचिका	१९७३
१५. युवराज चूण्डा	१९७८
१६. धुप्पल	१९८१
१७. चाणक्य	१९८२

<u>हिन्दी के समस्या-प्रधान उपन्यास तथा उपन्यासकार</u> --

हिन्दी के प्रारंभिक अर्थात प्रेमचंदपूर्व युग के उपन्यास तिलस्मी, ऐयारी, जासूसी प्रवृत्ति के ही अधिक रहे हैं। कुछ उपन्यासों में सामाजिक सुधार की दृष्टि से कुछ सामाजिक प्रश्नों को उठाया जरूर है, परंतु ऐसे उपन्यास बहुत ही कम मिलते हैं और जो मिलते हैं, उनमें उपन्यासकारों की उपदेशक मुद्रा ही अधिक रही है। यह सुधारवादी युग ही रहा है। डॉ. चण्डीप्रसाद जोशी का कथन है कि "इस युग के प्राय: सभी उपन्यास-लेखक पर्दा-प्रथा के प्रति अपनी घोर आसक्ति प्रदर्शित करते हैं।"[१] हिन्दी में समस्याप्रधान उपन्यासों की परम्परा प्रेमचंद से ही शुरु होती है। डॉ. रामदरश मिश्र कहते हैं -"हिन्दी में चिंतन-प्रधान सामाजिक उपन्यासों का प्रारंभ प्रेमचंद से हुआ। प्रेमचंद की पूर्ववर्ती उपन्यासकार स्वयं भी कल्पना के तिलस्मी संसार की सैर करता था और अपने पाठकों को भी करवाता था। प्रेमचंद ने उपन्यास को यथार्थवाद की ओर मोड़ा।"[२] इससे यह स्पष्ट हो जाता है कि समस्याप्रधान उपन्यासों का आरंभ प्रेमचंद से ही होता है। प्रेमचंद ने सामाजिक समस्याओं को राजनीतिक समस्याओं के साथ जोडकर उन्हें महत्वपूर्ण मुद्दे के रूपमें अपने उपन्यासों में स्थान दिया और नारी समाज के प्रति अपार श्रध्दा और सहानुभूति दिखायी। उन्होंने ही सर्व प्रथम सामाजिक समस्याओं के संदर्भ में अपने उपन्यास -'वरदान' और 'प्रेमाश्रम' में विधवा-समस्या, 'सेवासदन' में

---

१ डॉ. चण्डीप्रसाद जोशी - हिन्दी उपन्यास सामाजशास्त्रीय विवेचन - - पृ.सं.४२

२ डॉ. रामदरश मिश्र - हिन्दी उपन्यास - पृ.सं.३३

वेश्या-समस्या, 'निर्मला' में अनमेल-विवाह की भीषणता और दहेज - समस्या तो 'कर्मभूमि' में अछूत समस्या पर विशद विचार किया है। "प्रेमचंदजी ने अंधेरे में जूठा खाने को तैयार पर उजाले में निमंत्रण स्वीकार नहीं[1]" के सिद्धान्त पर चलनेवाले जर्जर समाज की विसंगतियोंपर करारी चोट की है। प्रेमचंद ही हिन्दी के प्रथम समस्या-प्रधान उपन्यासकार है।

प्रेमचंदोत्तर युग में भारत ने अपने युग की सबसे बडी राजनीतिक हलचल में प्रवेश किया। स्वतंत्रता-आन्दोलन के साथ ही देश की सारी समस्याएँ राजनीति से जुड गई और दुसरी ओर औद्योगिकरण से पूँजीवाद और कालाबाजार भी बढा। पैसा ही आदर, अधिकार, पद-प्राप्ति, सत्ता आदि का साधन बना। जिससे मानवीय - मूल्यों में तीव्र गति से विघटन हुआ। इस विघटन में ही भ्रष्टाचार, रिश्वतखोरी, बेईमानी, अवसर-वादिता, गंदी-राजनीति, पद-लोलुपता, सिध्दान्त-हीनता और स्वार्थ-परता को बढावा मिला - इन्हीं को आधार बनाकर हिन्दी में काफी उपन्यास लिखे गये। जिनमें समस्याओं का भी व्यापक चित्रण हुआ है। इसके साथ ही इनमें बदलते जीवन-मूल्यों तथा नयी धारणाओं का भी व्यापक धरातलपर यथार्थवादी चित्रण हुआ है। "परंतु प्रेमचंदोत्तर पीढि के कुछ ही उपन्यासकार स्वातंत्र्योत्तर-समस्याओं, बदलते जीवन मूल्यों और पनपती हुई नई धारणाओंपर चल पाए। जो चले भी वे अधिक दूर तक साथ न दे पाए। पुरानी पीढि न केवल अपने अनुभवों को उपन्यासों में दुहराती रही अपितु उन्हें विकृत भी करती रहीं।[2]"

हिन्दी उपन्यास साहित्य के माध्यम से हम भारतीय समाज के समस्याओं से परिचित हो सकते हैं। प्रेमचंद की तरह भगवतीबाबू के उपन्यास भी समस्या-प्रधान माने जाते हैं। प्रेमचंदजी ने जो समाज-सापेक्ष दृष्टिकोण अपनाया था उसीका

---

१ सेवासदन - पृ.सं.२९६

२ बादामसिंह रावत : स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी उपन्यास उपलब्धियों के ईर्द - - गिर्द से उध्दृत - पृ.सं.८५, समकालिन हिन्दी - साहित्य - संपादक - वेदप्रकाश शर्मा।

विकास भगवतीबाबू के उपन्यासों में हुआ है। भगवतीबाबू के उपन्यास भी सम-सामयिक समस्याओं का यथार्थ चित्र प्रस्तुत करते हैं। यहाँ हम कुछ सुप्रसिद्ध उपन्यासकारों - जिनमें प्रेमचंद, जैनेन्द्र, अज्ञेय, यशपाल, अमृतलाल नागर, नागार्जुन, फणीश्वरनाथ रेणु आदि हिन्दी उपन्यास जगत् के महान हस्ताक्षर माने जाते हैं, इनसे तुलना-अध्ययन के आधारपर भगवतीबाबू का हिन्दी समस्याप्रधान उपन्यासों में स्थान निर्धारण का प्रयास करेंगे।

प्रेमचंद और भगवतीबाबू --

मुंशी प्रेमचंद हिन्दी के प्रथम समस्या-प्रधान उपन्यासकार हैं। उन्होंने ही पहली बार अपने समकालीन युग को उपन्यास का विषय बनाया। अतः वे प्रथम समकालीन उपन्यासकार भी ठहरते हैं। "इनका विषय भारत की वह भूमि है - जिसमें उसकी आत्मा निवास करती है - गाँव और किसान इनके उपन्यास में प्राणतत्व हैं, जिससे विलग हो, एक पल भी जीवित रहना उनके लिए संभव नहीं। उनके समस्त उपन्यासों का उद्देश्य केवल हिन्दुस्तान की सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक पारिवारिक आदि समस्याओं को अपने उपन्यासों में प्रस्तुत करना रहा है।[१]" "और इसमें संदेह नहीं कि उनकी अवतरणा ही शायद साहित्य में जीवन की विषमताओं को, सामाजिक समस्याओं को चित्रित करने के हेतु हुई थी।[२]" परंतु प्रेमचंद के उपन्यासों में नारी जीवन से सम्बन्धित समस्याओं की अधिकता है, निम्नमध्यवर्गीय पात्रों के प्रति वे अधिक उदार रहे हैं और वे सामाजिक समस्याओं के चित्रण का आदर्शवादी या यथार्थवादी दृष्टिकोण से समाधान चाहते हैं। जब कि भगवतीबाबू में सामाजिक समस्याओं से सामना करने की शक्ति भी रही है और प्रेमचंद की तरह वे उदार भी नहीं हुए। जब वर्माजी ने उपन्यास लेखन - आरंभ किया, तब हिन्दी उपन्यास अपना स्वरूप ग्रहण कर रहा था। प्रेमचंद की भाँति उन्होंने भी समाज-सापेक्ष दृष्टिकोण अपनाकर तत्कालीन सामाजिक,

---

१ डॉ. महेन्द्र भटनागर - समस्या-मूलक उपन्यासकार - प्रेमचंद - पृ.सं. १२

२ डॉ. विमल भास्कर - हिन्दी में समस्या साहित्य - पृ.सं. ९०

राजनीतिक समस्याओं को तथा प्रेमचंद व्दारा स्थापित मान्यताओं के आधारपर भारतीय समाज के स्वरुप को अपने उपन्यासों का विषय बनाया और यथार्थ रुप में उसे प्रस्तुत भी किया । उन्होंने वेश्या नारी को समाज के सम्मानित कुल की नारी से ऊँचा बनाकर अपने प्रगतीशील दृष्टिकोण का परिचय भी दिया है।

प्रेमचंद ने 'गोदान' के माध्यम से हिन्दी उपन्यास जगत् को अत्यंत व्यापक फलक दिया और व्यक्ति के माध्यम से वर्ग और पूरे समाज ही नहीं, पूरे देश को सामने रखा । स्वाधीनता के बाद भी व्यापक पृष्ठभूमि को अपनाकर अनेक उपन्यास लिखे गये । इनमें भगवतीबाबू के चार बृहत उपन्यास हिन्दी उपन्यास जगत में विशेष महत्व रखते हैं । डॉ. रमाकांत श्रीवास्तव लिखते हैं "वर्माजी के प्रसिध्द उपन्यास 'भूले बिसरे चित्र' में महाकाव्य के स्वर विद्यमान हैं और न केवल भगवतीबाबू की सृजन यात्रा में बल्कि संपूर्ण हिन्दी साहित्य में वह 'मोल का पत्थर' माना जाता है । हिन्दी उपन्यास साहित्य को जिन उपन्यासों से ऊँचाइयाँ प्राप्त हुई हैं, उनमें 'भूले बिसरे चित्र' का महत्वपूर्ण स्थान है।"[1] प्रेमचंद की भाँति ही भगवतीबाबू ने भी अपनी लेखनी उपन्यास विधा को समर्पित की थी । दोनों सामाजिक तथा समस्याप्रधान उपन्यासकार ही थे।

जैनेन्द्रकुमार और भगवतीबाबू --

जैनेन्द्रकुमार हिन्दी के प्रथम मनोवैज्ञानिक उपन्यासकार माने जाते हैं । समस्या-प्रधान उपन्यासकारों में भी उनको विशेष महत्व दिया जाता है। "उन्होंने व्यक्ति-केंद्रित और समस्या-मूलक उपन्यासों का सुंदर रुप प्रस्तुत किया है।"[2] परंतु जैनेन्द्र जी ने एक साधारण व्यक्ति के जीवन में उठनेवाले सभी घटनाओं को ही अपने उपन्यासों का विषय बनाया, विशेषता नारी के प्रेम की समस्या को । इसी से वे व्यक्ति-मानस की अतुल गहराईयों को नापते हैं । वैसे तो वे मनोवैज्ञानिक उपन्यासकार ही है । आलोचकों ने जैनेन्द्र एवं भगवतीबाबू दोनों को व्यक्तिवादी

---

१ डॉ. रमाकांत श्रीवास्तव - उपन्यासकार भगवतीचरण वर्मा - व्यक्तिवादी - एवं नियतिवादी चेतना के संदर्भ में - पृ.सं.२९७

२ डॉ. विमल भास्कर - हिन्दी में समस्या साहित्य - पृ.सं.९८

उपन्यासकार भी करार दिया है। परंतु इन दोनों में प्रवृत्तिगत अंतर है। जैनेन्द्र के उपन्यासों में मानव-मन का ही विश्लेषण प्रधान है। जब कि भगवतीबाबू के उपन्यासों में बाह्य- चित्रण की प्रधानता है। व्यक्ति का दृष्टिकोण समाज का भी हो सकता है, इसी तथ्य पर भगवतीबाबू के उपन्यास आधारित है। उनके पात्र जैनेंद्र की तरह आत्मकेंद्रित नहीं है। अपने आप में कोई वस्तु बुरी नहीं होती। इसी दृष्टिकोण की प्रतीति भगवतीबाबू के उपन्यासों में आती है। उनमें किसी प्रकार की कोई असामाजिक भावना नहीं है। डॉ.सुरेश सिन्हा जैनेंद्र के बारे में लिखते हैं "जैनेन्द्र व्यक्ति की अतुल गहराईयों में पैठकर उसकी आन्तरिक प्रवृत्तियों को स्पष्ट कर, उसके संघर्ष को समाप्त कर, सुविधा में उसके मन को एक निश्चित दिशा देने का प्रयत्न किया है।[१]" इससे स्पष्ट होता है कि जैनेंद्र व्यक्ति के अन्तरमन के चितेरे हैं। डॉ.रामदरश मिश्र कहते हैं -"जैनेंद्र का व्यक्ति बहुत कुछ सामाजिक यथार्थ से निरपेक्ष-विशिष्ट दायरे में घूमता हुआ दिखायी पडता है।[२]" इनके उपन्यासों में हमें व्यक्ति की काम-कुण्ठाओं, उलझनों और पीडा का गहन चित्रण मिलता है। इसके विपरित भगवतीबाबू समसामयिक उपन्यासकार हैं। इनके उपन्यासों में परिस्थितियों का चित्रण मिलता है। साथ ही साथ समाज का विशद चित्रण भी। भगवतीबाबू के अधिकतर उपन्यास सामाजिक समस्याओं पर ही आधारित हैं। तत्कालीन परिवेश उनके उपन्यासों में साकार हो उठा है।

जैनेंद्र के उपन्यासों में क्रांतिकारी पात्रों का सृजन किया गया है। परंतु स्वतंत्रता-आन्दोलन की हलचल का वर्णन बिलकुल नहीं है। जब कि भगवतीबाबू के उपन्यासों में स्वतंत्रता आन्दोलन का व्यापक चित्रण मिलता है। साथ ही उनसे सम्बन्धित समस्याओं को भी उठाया है। 'टेढे मेढे रास्ते', 'भूले बिसरे चित्र', 'सीधी सच्ची बातें' आदि उपन्यासों में स्वतंत्रता आन्दोलन का विशद चित्रण प्रस्तुत किया है। 'सुनिता' और 'रेखा' की अगर हम तुलना करें तो यही दिखायी

---

१ डॉ.सुरेश सिन्हा - हिन्दी उपन्यास - पृ.सं.२७८

२ डॉ.रामदरश मिश्र - हिन्दी उपन्यास - एक अन्तर्यात्रा - पृ.सं.९१

देखा कि दोनों में अन्तर्द्वन्द्व का चित्रण है - जो काम से प्रेरित है। परंतु इनमें भी एक मूलभूत अंतर दिखायी देता है। 'सुनीता' का अन्तर्द्वन्द्व काम-ग्रंथी से सम्बन्धित है तो 'रेखा' में परिस्थितियों की विडम्बना का चित्रण प्रस्तुत किया गया है। जैनेन्द्र जी पात्रों की सृजना केवल उनके जीवन की विविध समस्याओं के चित्रण के लिए करते हैं। वे इन पात्रों की व्यक्तिगत समस्याओं-विशेषता नर-नारी के प्रेम की समस्या में ही अधिक उलझ गये हैं। जब कि भगवतीबाबू युगीन समाज को उसके व्यापक चित्र-फलक पर - समस्याओं के चित्रण के लिए आधार बनाया है। जैनेन्द्र का सर्वाधिक महत्त्व कथा-साहित्य को नयी दिशा देने में ही है। जब कि भगवतीबाबू ने प्रेमचंद की परम्परा को आगे बढ़ाने में अपना महत्त्वपूर्ण योगदान दिया है।

अज्ञेय और भगवतीबाबू ---

अज्ञेय, जैनेन्द्र की परम्परा को सर्वोच्च तथा प्रौढ रुप देने में सबसे आगे रहे हैं। हिन्दी जगत् के वे सर्वोच्च व्यक्तिवादी उपन्यासकार हैं। व्यक्ति और समाज के संघर्ष में वे व्यक्ति की सत्ता बनाये रखने के समर्थक हैं। 'शेखर: एक जीवनी' अज्ञेय का एक अद्वितीय उपन्यास है। प्रेम, यौन - अतृप्ति तथा विवाह इस उपन्यास की समस्याएँ हैं। परंतु इनका चित्रण समाज सापेक्ष न होकर, व्यक्ति की व्यक्तिगत समस्याओं के रुप में ही किया गया है। "शेखर: एक जीवनी' एक ऐसे व्यक्ति की जीवनी है, जो अपनी अनुभूतियों के प्रति बेहद ईमानदार है।'[१] इसमें व्यक्ति की नितांत निजी स्वनिर्मित समस्याओं का चित्रण है।

अज्ञेय और भगवतीबाबू दोनों के उपन्यासों में अहं की समस्या का चित्रण मिलता है, फिर भी इनमें मूलत: अन्तर है। व्यक्ति और समाज के संघर्ष में यह अहं एक को प्रेरित करता है, तो दुसरा व्यक्ति को तोड़ता है। अज्ञेय का शेखर कहता है "मुझे मूर्ति उतनी नहीं चाहिए, मुझे मूर्ति पूजक चाहिए। मुझे वैसा कोई उतना नहीं चाहिए, जिनकी ओर मैं देखूँ, मुझे वह चाहिए, जो मेरी ओर देखे।"[२]

---

१ डॉ. रामदरश मिश्र - हिन्दी उपन्यास : एक अन्तर्यात्रा - पृ.क्रं. ११९

२ अज्ञेय - शेखर एक जीवनी (प्रथम भाग) पृ.क्रं. १५४

भगवतीबाबू के 'चित्रलेखा' का बिजगुप्त कहता है – "व्यक्तित्व जीवन में प्रधान है और व्यक्ति से ही समुदाय बनता है। जब व्यक्ति ही प्रधान है, तो उस व्यक्ति को समुदाय का भाग बनना अपना ही अपमान करना है।"[1] इसी प्रकार 'टेढे मेढे रास्ते' के रामनाथ तिवारी, दयानाथ, उमानाथ, 'रेखा' की रेखा और प्रभाशंकर इन सभी को उनका अहं तोडकर रखता है। जैनेंद्र विशुद्ध व्यक्तिवादी उपन्यासकार है जब कि भगवतीबाबू सामाजिक उपन्यासकार है। "वे केवल व्यक्तिवादी दर्शनपर विश्वास करने के कारण व्यक्तिवादी है।"[2]

<u>यशपाल और भगवतीबाबू --</u>

यशपाल प्रगतिशील उपन्यासकारों में सर्वोच्च स्थान रखते हैं। वे मूलत: मार्क्सवादी कथाकार है। अत: वे भगवतीबाबू के जीवन दर्शन से बिल्कुल भिन्न मार्क्सवादी दर्शनपर विश्वास रखते हैं। व्यक्तिवाद और नियतिवाद दोनों से ही उनका विरोध है। किन्तु सामाजिक समस्याओं के चित्रण के स्तर पर दोनों बहुत निकट पडते हैं। यशपाल यथार्थवादी उपन्यासकार हैं, वे नग्न यथार्थ का भी चित्रण अपने उपन्यासों में यथा तथ्य के रूप में करते हैं। उन्होंने विशेषकर - सामाजिक यथार्थ के चित्रण में आर्थिक विषमता को ही अधिक महत्व दिया है। उनपर मार्क्सवादी चिंतन का काफी प्रभाव रहा है। यशपाल केवल मनुष्य की आर्थिक विषमता और सामाजिक परिस्थितियों का ही चित्रण नहीं करते अपितु आर्थिक समस्याओंका निरूपण भी करते हैं। रूढियों का खण्डन और सामाजिक समस्याओं का अंकन उनका उद्देश्य रहा है। जब कि भगवतीबाबू इन्हें अपने व्यक्तिगत दर्शनपर ही तोलते हैं। जहाँ यशपाल अपनी समस्त समस्याओंका समाधान साम्यवादी दृष्टिकोण को अपनाकर करते हैं, वहाँ भगवतीबाबू किसी भी राजनीतिक वाद विशेष से बंधे हुए नहीं हैं। उनका दृष्टिकोण टेढे मेढे रास्ते का ही रहा है। यशपाल के 'मनुष्य के रूप' की सोमा और भगवतीबाबू के 'आखिरी दाँव' की चमेली में काफी समानता दिखाई देती है।

---

१ चित्रलेखा – पृ.सं.१२

२ डॉ.रमाकांत श्रीवास्तव – उपन्यासकार भगवतीचरण वर्मा – पृ.सं.२९९

यशपाल साम्यवादी विचारधारा के प्रचारक रहे हैं और उन्होंने उसके साहित्यिक संभावनाओं का अत्यंत सफलता से प्रयोग किया है। भगवतीबाबू की तरह यशपाल भी एक सफल समस्याप्रधान उपन्यासकार भी रहे हैं। परंतु विशिष्ट वादपर विश्वास करने के कारण यशपाल पर प्रचारवादिता का आरोप किया जाता है। जब कि वादों पर अविश्वास करने पर भी मानव के प्रति गहरा सहानुभूति रखने के कारण भगवतीबाबू के उपन्यासों का महत्व बढ जाता है।

अमृतलाल नागर और भगवतीबाबू --

हिन्दी उपन्यास जगत् में प्रेमचंद की परम्परा को निभानेवाले सफल उपन्यासकारों में अमृतलाल नागर और भगवतीबाबू दोनों के नाम आते हैं। डॉ. देवराज उपाध्याय ने "प्रेमचंद की तरह कहानी और पात्र दोनों पर समान दृष्टि रखने के कारण भगवतीबाबू को प्रेमचंद का संशोधित संस्करण कहा है।[१]" तो डॉ. लक्ष्मीसागर - वार्ष्णेय - अमृतलाल नागर के उपन्यास "बूँद और समुद्र" के बारे लिखते हैं " एक प्रकार से प्रेमचंद शैली की उस में पुनरावृत्ति थी। वही स्थूलता पात्रों के व्यक्तित्व का वही एकांगी रुप और आदर्श का वही आरोपण। भगवतीबाबू और अमृतलाल नागर दोनों सामाजिक समस्याओं का यथार्थ चित्र प्रस्तुत करते हैं। दोनों समाज और बदलते हुए जीवन मूल्यों को अपने उपन्यासों का विषय बनाया। सामाजिक और व्यक्तिगत समस्याओं को दोनों एक प्रकार से समानान्तर या परस्पर सम्बन्ध मानकर उनके बीच प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष सूत्रों की खोज करने का प्रयास करते हैं।

अमृतलाल नागर का प्रसिध्द उपन्यास बूँद और समुद्र मानव पर समाज व्दारा किये गये अत्याचारों को चित्रित करता है। परंतु वह एक दृष्टिसे व्यक्ति तथा समाज की एकता पर बल देनेवाला उपन्यास ही है। आधुनिक समाज की सामाजिक, आर्थिक राजनीतिक शक्तियों और परिस्थितियों के फलस्वरुप उत्पन्न होनेवाले जीवन दृष्टियों, व्यक्तियों और उनकी समस्याओं का व्यापक चित्रण किया है। भगवतीबाबू

---

१ डॉ. देवराज उपाध्या - टेढे मेढे रास्ते - एक समीक्षा - प्रतीक (प्रयाग) सं. १- ग्रीष्म।

२ डॉ. लक्ष्मीसागर वार्ष्णेय - हिन्दी उपन्यास, उपलब्धियाँ - प.सं. ९०

का 'भूले बिसरे चित्र' उपन्यास भी ठीक इसके निकट बैठता है। 'बूँद और समुद्र' की तरह 'अमृत और विष' तथा 'सुहाग के नूपुर' इनके उल्लेखनीय उपन्यास हैं। दोनों में जिससे गंभीरता है, जिससे दोनों अपने उपन्यासों में रोचकता लाने में सफल रहे हैं।

इस समानता के बाद एक मूलभूत अंतर भी इनमें पाया जाता है। अमृतलाल नागर समाज व्यवस्था में व्यक्ति के महत्त्व को स्वीकार करते हुए भी समाज के लिए पूर्ण समर्पित व्यक्ति की अनिवार्यता समझते हैं। जब कि भगवतीबाबू व्यक्ति के अहम् के परिष्कार के पक्ष में ही अधिक आस्था दिखाते हैं। 'सामर्थ्य और सीमा' में वे इसे स्पष्ट शब्दों में हमारे सामने रखा है। अहम् से भरे व्यक्तियों को वर्माजी ने तोडा है, उनका पराजय कराकर, अहं पर प्रहार करता है। जब कि अमृतलाल नागर व्यक्ति का महत्व स्वीकारते हुए भी उसे समाज का ही एक अंग बनाए रहने में ही उचितता को दर्शाते हैं। समाज के विघटन की समस्या को वे इन शब्दों में रखते हैं। "हर बूँद का महत्व है, क्योंकि वही तो अन्तत सागर है, एक बूँद भी व्यर्थ क्यों जाये ? उसका सदुपयोग करो। पर कैसे हो यह सदुपयोग, कैसे वह बूँद अपने को महासागर अनुभव करे ? वह इस विशाल जन सागर में नितांत अकेली है। ऐसी स्थिति में समाज का संगठन क्यों कर रहा है। और सामाजिक जीवन कैसे चले ?"[1] नागरजी इसका समाधान भी देते हैं –"मनुष्य का आत्मविश्वास जागना चाहिए, उसके जीवन में आस्था जागनी चाहिए। मनुष्य को दुसरे के सुख-दु:ख में अपना सुख-दु:ख मानना चाहिए। ... जैसे बूँद से बूँद जुडी रहती है। लहरों से लहरें। लहरों से समुद्र बनता है। इस तरह बूँद में समुद्र समा गया है।"[2] इस प्रकार अमृतलाल नागर ने जहाँ समस्याओंका चित्रण किया है, वहाँ उसका समाधान भी प्रस्तुत किया है।

आस्था के प्रश्न को लेकर जब हम चर्चा करते हैं तो दोनों में अंतर अधिक स्पष्ट दिखाई देता है। अमृतलाल नागर आस्था में अधिक विश्वास रखते हैं। इनके पात्र परिस्थितियोंसे संघर्ष करते हैं और उनमें काफी आत्मविश्वास रहता है। उन्होंने -

---

१ बूँद और समुद्र – पृ.सं.४५५

२ बूँद और समुद्र – पृ.सं.६०४–६

मनुष्य के आत्मविश्वास को प्रथम स्थान दिया है। 'बूँद और समुद्र' में वे कहते हैं "स्वामी विवेकानंद ने कहीं कहा है कि आत्मविश्वास खोकर ईश्वर या माने हुए तैंतीस कोटि पौराणिक देवी देवताओं में विश्वास रखना गलत है। आत्मविश्वास ही नये युग का धर्म है।[1]" जब कि भगवतीबाबू नियतिवादी आधारपर विश्वास रखते हैं। वे मनुष्य को परिस्थितियों के सामने पराजित करके उसे आत्महत्या, विक्षिप्त या अवसाद के सागर में गोते खाने को मजबुर कराते है। परिस्थितियों से संघर्षरत रहने का, उनसे जूझते रहने की सँभावना बहुत ही कम है। भगवतीबाबू इसे स्वीकारते हुए कहते हैं "मैं जो कुछ हूँ, परिस्थितियों ने मुझे वह बनाया है और वह परिस्थितियाँ मेरे हाथ में नहीं थी।[2]" इससे यह स्पष्ट हो जाता है कि भगवतीबाबू नियतिवादी दर्शन पर विश्वास रखनेवाले हैं।

उपर्युक्त उपन्यासकारों के साथ ही नागार्जुन और फणीश्वरनाथ रेणु हिन्दी समस्या-उपन्यास जगत्में विशेष उल्लेखनिय उपन्यासकार है। नागार्जुन एक जन कवि ही नहीं, बल्कि आज के हिन्दी उपन्यास जगत् में प्रेमचंदीय परम्परा को पुन: स्थापित करके आगे बढनेवाले प्रसिद्ध उपन्यासकार माने जाते हैं। इनके उपन्यासोंका विषय जन साधारण से सम्बन्धित होता है। नागार्जुन भी यशपाल की तरह प्रगतिशील लेखक हैं। उनपर भी साम्यवादी चेतना का प्रभाव रहा है। इन्होंने जन सामान्य की आर्थिक विषमता, पीडा, अभाव, अपमान, संघर्ष को यथार्थवादी दृष्टिकोण अपनाकर अत्यंत सजीवता से चित्रित किया है। "नागार्जुन के उपन्यास आँचलिक और समाजवादी उपन्यासों के बीच पडते हैं। वैसे मूल स्वर तो उनका समाजवादी ही है, किन्तु क्यूँकि उनकी कथा एक अंचल से ली गयी होती है, इस लिए उन्हें आँचलिक कहा गया है।[3]" नागार्जुन ग्रामीण उपन्यासकार हैं। उन्होंने समाजवादी जीवन दर्शन के आधारपर रूढीगत सामाजिक और राजनीतिक शोषण तथा वर्ग वैषम्य का विरोध कर ग्रामोन्नति का रचनात्मक प्रगतिशील समाधान प्रस्तुत किया है। परंतु ग्रामीण जन जीवन की परम्परागत

---

१ बूँद और समुद्र - पृ.सं.५८२

२ भगवतीचरण वर्मा - एक स्वर और से उध्दृत, पृ.सं.४ - चित्रलेखा से सीधी सच्ची बातें तक - डॉ. कुसुम वार्ष्णेय

३ डॉ. रामदरश मिश्र - हिन्दी उपन्यास - एक अन्तर्यात्रा - पृ.सं.२३०

रुढ मान्यताओं, ठेठ भाषा प्रयोग, रीति-रिवाज आदि के माध्यम से स्वातंत्र्यपूर्व और बाद के समाज-जीवन का यथार्थ चित्रण प्रस्तुत करते है।

फणीश्वरनाथ रेणु भी प्रेमचंदोत्तर समस्या उपन्यासकारों में विशिष्ट स्थान के अधिकारी हैं। हालाँकि वे एक सफल आँचलिक उपन्यासकार हैं। फणीश्वरनाथ रेणु ने ही सर्व प्रथम आँचलिकता को गहरे रुप में प्रस्तुत किया है। उनका मैला आँचल एक सफल समस्या मूलक उपन्यास है। इसमें अँचल विशेष की कथा ही नहीं कही गयी, अपितु यह एक प्रतीकात्मक उपन्यास है। मेरीगंज भारत के गांवों का प्रतीक है। वह भारत के प्रत्येक अँचल का प्रत्यक्ष-अप्रत्यक्ष रुप ही है। इसमें मेरीगंज की शोषित एवं उपेक्षित जीवन की अच्छाइयाँ एवं बुराईयाँ को यथार्थता से प्रस्तुत किया है। इसमें आर्थिक, राजनीतिक, सामाजिक सभी प्रकार की समस्याएँ मिलती हैं। प्रेमचंद की तरह ही रेणु भी समस्याओं का समाधान देखते हैं। मात्र हिन्दी के प्रथम आँचलिक उपन्यासकार के नाते ही वे प्रसिध्द रहे हैं।

इनके अतिरिक्त भगवतीबाबू के समकालीन उपन्यास लेखकों में नरेश मेहता, मोहन राकेश, निर्मल वर्मा, राही मसूम रजा, उषाप्रियम्बदा, शिवानी आदि के नाम उल्लेखनिय है। और अन्य अनेक उपन्यासकारों ने भी अपना योगदान दिया। इन्होंने अनेकानेक समस्याओं को अपने उपन्यासों का विषय बनाया और यथार्थ शैली से उनका चित्रण भी किया। परंतु स्वतंत्र रुपसे चित्रण करनेवाले बहुत कम ही रहें। युग की समस्याओं को लेना उनके लिए अनिवार्य हो गया, अतः वे उनका आंशिक रुप चित्रित करें या भव्य एवं विशाल, परंतु हिन्दी के समस्या-प्रधान उपन्यासों में तथा उपन्यासकारों में उनका स्थान गौण ही रहा। कुछ उपन्यासकारों ने इस परम्परा का दूर तक साथ दिया। उन्हींको लेकर ऊपर विवेचन किया गया है।

भगवतीबाबू का स्थान --

प्रेमचंद से हिन्दी उपन्यासों में समस्या उपन्यासों की जो एक धारा चल निकली थी उसका भगवतीबाबू ने बहुत दूर तक साथ देकर, उसे निभाते रहें। प्रेमचंद के बाद हिन्दी समस्या प्रधान उपन्यासकारों में अगर किसी को प्रथम स्थान देना

होगा तो अकेले भगवतीबाबू को ही । वे ही इसके अधिकारी हैं । केवल प्रेमचंद के बाद समस्याप्रधान उपन्यासकारों में सर्व प्रथम नाम भगवतीबाबू का ही आता है । उनके उपन्यासों का हिन्दी जगत में विशेष महत्व रहा है । उनका प्रसिद्ध उपन्यास 'चित्रलेखा' पाप-पुण्य की शाश्वत समस्या को लेकर तत्कालीन उपन्यासों में महत्व प्राप्त कर सका और आज भी उसका स्थान अक्षुण्ण है । तो उनका 'प्रश्न और मरीचिका' आधुनिक उपन्यासों की पंक्ति में शामिल हो सका है । 'भूले बिसरे चित्र' तो हिन्दी साहित्य में 'मील का पत्थर' माना जाता है । उनके सभी उपन्यासों में किसी न किसी समस्या का यथार्थ चित्रण देखने मिलता है । 'चित्रलेखा' 'टेढ़े मेढ़े रास्ते', 'आखिरी दाँव', 'भूले बिसरे चित्र', 'सीधी सच्ची बातें', 'सामर्थ्य और सीमा', 'सबहिं नचावत राम गुसाईं', 'प्रश्न और मरीचिका' प्रसिद्ध समस्या मूलक उपन्यास हैं । जिनमें वर्माजी ने समस्त मानव जीवन की समस्याओं को यथार्थ भावभूमिपर प्रस्तुत किया है । और उनका कुछ हदतक समाधान भी प्रस्तुत किया है । और यह नियतिवादी दर्शनपर आधारित है, न कि किसी राजनैतिक वाद से सम्बन्ध रखता है । क्योंकि वर्माजी नियतिवादी दर्शनपर विश्वास रखते हैं । और मनुष्य को अपनी समस्याओं का समाधान ढूँढने में असमर्थ बताते हैं । "समस्याएँ हमेशा विद्यमान रहेंगी और मनुष्य उनसे जूझता रहेगा । वह समय को बदलना अवश्य चाहेगा पर जो होना है वह होना ही रहेगा । मनुष्य की असमर्थता पर विश्वास करने के कारण लेखक समस्याओं का कोई समाधान प्रस्तुत नहीं करता । आज का विश्व किसी न किसी राजनैतिकवाद के माध्यम से इन समस्याओं का समाधान पाना चाहता है । भगवतीबाबू इन वादों को अंततोगत्वा मानवीय अहम् का ही दुसरा रूप मानते हैं ।[१]" "परंतु वर्माजी के उपन्यासों में चित्रित यह नियतिवाद कहीं भी निष्क्रियता का जामा नहीं पहनाता है वह कर्म करने की प्रेरणा ही देता है । वर्माजी ने जहाँ कहीं अपने उपन्यासों में नियतिवादी विचारधारा की अभिव्यंजना की है वह मानव मन को अकर्मण्य नहीं बनाती, अपितु कर्म करने की प्रेरणा देती है ।[२]"

---

१ डॉ. रमाकांत श्रीवास्तव - उपन्यासकार भगवतीचरण वर्मा - (नियतिवादी एवं व्यक्तिवादी चेतना के संदर्भ में) - पृ.सं.२६९

२ डॉ. बैजनाथ प्रसाद शुक्ल - भगवतीचरण वर्मा के उपन्यासों में युग चेतना - पृ.सं.३४८

इसी आधारपर कुछ आलोचकों ने भगवतीबाबू को व्यक्तिवादी एवं नियतिवादी उपन्यासकार करार दिया है। और उनके उपन्यासों का उद्देश्य मध्यम वर्गीय समाज में व्यक्तिवादी चेतना को अभिव्यक्ति देना माना है। ऐसा होते हुए भी वर्माजीने सामाजिक दायित्व को पूर्णत: निभाया है। उनके उपन्यासों में व्यापक धरातलपर युग चेतना का चित्रण हुआ है। भले ही आलोचकों ने उन्हें व्यक्तिवादी उपन्यासकार घोषित किया हो। परंतु उनके उपन्यासों में युग का प्रभाव सर्वत्र देखा जाता है। "वर्माजी व्यक्तिवादी साहित्यकार हैं। युग की विभिन्न विचार धाराओं का उनपर पूर्ण प्रभाव है। साथ ही उनपर कला कला के लिए के विरोधी इब्सन तथा बर्नार्ड-शा की यथार्थवादी विचारधारा का भी असर पडा है।[१]" जैनेन्द्र और अज्ञेय की तरह भगवतीबाबू विशुध्द व्यक्तिवादी उपन्यासकार नहीं हैं और आत्मकेन्द्रित तो बिल्कुल नहीं। सामाजिक दायित्व को लेकर ही वे आगे बढे हैं। उनके उपन्यासों में वास्तविकता का चित्रण है। वे सचमुच यथार्थवादी साहित्यकार हैं। डॉ.नवल किशोर का इस सम्बन्ध में कथन है --"वर्माजी का नियतिवादी दृष्टिकोण यथास्थितिवाद के पक्ष में आता है। बुनियादी तौर पर वे यथार्थवादी प्रकृति के लेखक हैं। हमारे अभी गुजरे कल से और आज से ही अपने विषय चुनते हैं।[२]" यही कारण है कि उन्नसवी और बीसवीं शताब्दी का विराट जन जीवन उनके समस्याओं के साथ वर्माजी के कृतियों में चित्रित हुआ है। जो आदर्शात्मक या काल्पनिक न होकर यथार्थवादी है।

भगवतीबाबू ने भारतीय समाज के परिवर्तनों को अत्यंत सजगता से, एक व्यक्ति तथा साहित्यकार के आँखों से देखा, समझा और उतनीही सजीवता से अपने उपन्यासों में उनको चित्रित किया है। उनके उपन्यासों में सर्वत्र युग भावना के स्पंदन और क्रंदन सुनाई पडता है। अत: वे सच्चे अर्थों में सामाजिक उपन्यासकार ही हैं। डॉ.धर्मवीर भारती इनकी विशेषता पर लिखते हैं "भगवतीचरण वर्मा, मेरी

---

१ डॉ.अमरसिंह लोधा - प्रेमचंदोत्तर हिन्दी उपन्यासों में सामाजिक चेतना - - पृ.सं.९४

२ डॉ.नवल किशोर - आधुनिक हिन्दी उपन्यास और मानवीय अर्थवत्ता - - पृ.सं.१८४

दृष्टि में, हिन्दी के अकेले कथाकार हैं, जिन्होंने यह चुनौती स्वीकारी है और अपने उपन्यासों के माध्यम से इस पूरी शताब्दी में भारतीय सामाजिक ढाँचे के बाहरी और अंदरूनी ठहरावों और बदलावों का एक क्रमबद्ध चित्रण किया है, और न केवल सामाजिक और पारिवारिक टूटते बनते सम्बन्धों का सजीव चित्रण किया है, तथा आंतरिक भावनात्मक धरातल की उथल-पुथल खूबी से आँकी है, वरन् बाहरी तथाकथित ऐतिहासिक घटनाओं के क्रम को भी उतनी ही खूबी से निभाते चले गये हैं, यह तो कमजोरी हमारी वर्तमान हिन्दी समीक्षा की है, कि जो अपने ओछे आग्रहों या दंभी शास्त्रीयता, या झूठी सैध्दान्तिकता की आड़ में अपने खोखलेपन को छिपाने में ही जी-जान से लगी हुई है, वरना किसी और भाषा में यदि 'भूले बिसरे चित्र', 'सीधी सच्ची बातें,' और 'प्रश्न और मरीचिका' - यह उपन्यासत्रयी प्रकाशित होती तो भगवतीबाबू की असाध्य अर्वाचीन ऐतिहासिक कथोपलब्धि का महत्त्व पहचाना जाता।[१]"

प्रेमचंद ने जो समाज सापेक्ष दृष्टिकोण अपनाया था - उसीका विकास भगवतीचरण वर्मा के उपन्यासों में हुआ है और सामाजिक समस्याओंका यथार्थ - चित्रण भी। अत: भगवतीबाबू को प्रेमचंद परम्परा के उपन्यासकार माने जाते हैं। "वर्माजी के उपन्यासों में नीहित सामाजिक उद्देश्य और पुष्ट कथानक दोनों के कारण उन्हें प्रेमचंद का संशोधित संस्करण भी कहा गया है।[२]" उनके उपन्यासों में राजनीतिक, सामाजिक, आर्थिक, धार्मिक एवं सांस्कृतिक समस्याओंका यथार्थ चित्रण हुआ है। जिन हिन्दी उपन्यासकारों ने अपने उपन्यासों के माध्यम से इन समस्याओं को सामने रखा है। उनमें प्रेमचंद के बाद भगवतीबाबू ही सबसे आगे रहे हैं। प्रेमचंद की तरह ही वर्माजीने अपने युग की सारी समस्याओं को उठाया है। इन्हें किसी वाद विशेष को चश्मा लगाकर नहीं देखा - जैसे समाजवादी उपन्यासकार देखते हैं। समाजवादी प्रचारक लेखकों ने भारतीय समाज की विभिन्न समस्याओं का यथार्थ चित्रण अवश्य किया है परंतु उनका समाधान विशिष्ट राजनैतिकवाद का सहारा लेकर ही किया है। भगवतीबाबूने समस्याओं के हर पक्ष

---

१ धर्मयुग : १८ अक्तुबर १९८१ (भगवतीबाबू) से उद्धृत पृ.सं.३८

२ डॉ.रणवीर रांग्रा - समसामयिक हिन्दी साहित्य - पृ.सं.१३६ से उद्धृत संपादक - हरिवंशराय बच्चन, नगेन्द्र, भारतभूषण अग्रवाल

पर सोचने का प्रयास किया है, उनका विश्लेषण भी किया । किन्तु किसी - राजनैतिकवाद विशेष प्रति उनका झुकाव नहीं रहा ।

प्रेमचंद की तरह ही भगवतीचरण वर्मा भी समस्या मूलक उपन्यासकार हैं । उनका उद्देश्य अपने पात्रों का मनोवैज्ञानिक विश्लेषण करना नहीं, अपितु वृहद समाज की पृष्ठभूमि में उनके निराले व्यक्तित्व का परिचय देना है । इन शब्दों में डॉ. अमरसिंह लोधा ने भगवतीबाबू को समस्या मूलक उपन्यासकार के रूपमें ही स्वीकारा है । प्रेमचंदोत्तर औपन्यासिक धारा में उनका विशेष महत्व रहा है । "एक ही कृति के बलपर संपूर्ण कथा साहित्य में यदि किसी को गौरव दिया जा सकता है तो निश्चित रूप से वह वर्माजी है ।[1]" और उनकी वह एक कृति है - 'चित्रलेखा' जो समस्या मूलक उपन्यास ही है ।

इसप्रकार हम देखते हैं कि भगवतीबाबू समस्या मूलक उपन्यासकार है । उनके उपन्यासों में युग का प्रभाव सर्वत्र देखा जा सकता है । व्यक्तिवादी कलाकार होते हुए भी उन्होंने सामाजिक दायित्व निभाया है । सामाजिक दायित्व को स्वीकार करके ही उन्होंने उपन्यास लिखें हैं । उनके उपन्यासों में वास्तविकता का चित्रण मिलता है । राजनीतिक, सामाजिक, आर्थिक तथा धार्मिक एवं सांस्कृतिक समस्याओं का व्यापक धरातलपर यथार्थ चित्रण करना ही वर्माजी के उपन्यासों का उद्देश्य रहा है । इस प्रकार भगवतीचरण वर्मा प्रेमचंद परम्परा के ही उपन्यासकार ठहरते हैं । अतः हिन्दी के समस्या प्रधान उपन्यासों में प्रेमचंद के बाद अगर किसी का नाम लिया जाता है तो अकेले भगवतीबाबू का ही । निःसंदेह भगवतीबाबू हिन्दी समस्या प्रधान उपन्यासकारों में सर्वोच्च स्थान के अधिकारी हैं ।

---

१ डॉ. बैजनाथ प्रसाद शुक्ल - भगवतीचरण वर्मा के उपन्यासों में युग चेतना - पृ.सं.३९